SAMVARDHINI
PEER REVIEWED MULTILINGUAL E-RESEARCH JOURNAL
(ISSN ONLINE: - 2583-7176)
https://samvardhini.in
https://www.samskritpromotion.in

आर्य शब्द का भाषाशास्त्रीय, दार्शनिक एवं सांस्कृतिक अनुशीलन (वैदिक दृष्टि से आधुनिक संदर्भ तक)

डॉ. अमित शर्मा

SAMVARDHINI :- 01/12/2025
Volume - 7
Issue - 2
(ISSN ONLINE :- 2583-7176)
https://samvardhini.in

डॉ. अमित शर्मा
सहायकाचार्य, संस्कृत विभाग,
डी.ए.वी. शताब्दी महाविद्यालय,
फरीदाबाद
Email - davccf.sanskrit@gmail.com

शोधसार

यह शोध-पत्र 'आर्य' शब्द के भाषाशास्त्रीय, दार्शनिक, सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक विकास का वैदिक युग से लेकर आधुनिक संदर्भों तक विस्तृत अनुशीलन प्रस्तुत करता है। 'आर्य' शब्द की व्युत्पत्ति 'ऋ गतौ' धातु से मानी गई है, जिसका मूल अर्थ गति, प्रगति, ज्ञान और उन्नति है। वैदिक साहित्य में यह शब्द जाति-निरपेक्ष, गुणप्रधान, आचरणाधारित और मानवतावादी अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। ऋग्वेद में आर्यत्व को प्रकाशप्रियता, धर्मनिष्ठा, सत्य-कर्मशीलता, वीरत्व और सांस्कृतिक उन्नति से जोड़ा गया है। उत्तरवर्ती ग्रंथों-निरुक्त, अमरकोश, अष्टाध्यायी, मनुस्मृति, रामायण, महाभारत, बौद्ध साहित्य और अर्थशास्त्र-में आर्यत्व का नैतिक, दार्शनिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य क्रमशः विकसित होता है। आधुनिक युग में महर्षि दयानन्द सरस्वती ने आर्यत्व को पुनः उसके वैदिक, गुणाधारित, मानवतावादी और सार्वभौमिक स्वरूप में प्रतिष्ठित किया।

यह अध्ययन स्पष्ट करता है कि 'आर्य' कोई जातिवाचक या नस्लगत पद नहीं, बल्कि सत्य, तप, श्रम, सदाचार, संयम, करुणा, विवेक और कर्तव्यनिष्ठा से अर्जित उत्कृष्ट मानवीय चरित्र का द्योतक है। समकालीन समाज में जब जाति, वंश, वर्ण और नस्ल आधारित भ्रम पुनः उभर रहे हैं, तब यह वैदिक संदेश अत्यंत सार्थक है कि श्रेष्ठता जन्म से नहीं, आचरण से प्राप्त होती है। यह शोध-पत्र इसी वैदिक, नैतिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोण को पुनः स्पष्ट करता है।

कूटशब्द - आर्य, व्युत्पत्ति, वैदिक साहित्य, भाषाशास्त्र, दार्शनिक अर्थ, दयानन्द सरस्वती, सांस्कृतिक विश्लेषण, मानवतावाद, वैदिक संस्कृति

भूमिका

भारतीय संस्कृति के इतिहास में **"आर्य"** शब्द केवल एक जातिवाचक संकेत नहीं, बल्कि यह मानवीय उत्कृष्टता, नैतिक उदात्तता और आध्यात्मिक प्रगतिशीलता का द्योतक है। ऋग्वेद से लेकर महाभारत, मनुस्मृति, अर्थशास्त्र, बौद्ध ग्रंथों और आधुनिक वैदिक व्याख्याओं तक यह शब्द एक ऐसे मानव की पहचान कराता है जो सत्य, तप, श्रम और ज्ञान के मार्ग पर चलता है।

वेदों में 'आर्य' शब्द का प्रयोग "धर्मशील", "प्रकाशप्रिय" और "सभ्य" व्यक्ति के अर्थ में हुआ है - जैसे "**ज्योतिश्चक्रथुरार्याय**"[1] अर्थात् देवताओं ने आर्यों के लिए ज्ञानरूपी ज्योति का सृजन किया। अतः आर्यत्व कोई वंश या वर्ण नहीं, बल्कि संस्कार और सद्गुणों की स्थिति है।

व्युत्पत्ति : धातु, प्रत्यय और दार्शनिक अर्थविस्तार

संस्कृत में **'आर्य'** शब्द **'ऋ'** धातु से निष्पन्न है, जो गत्यर्थक मानी गई है। **"ऋ गतौ"** - धातुपाठ **"गतेस्त्रयोर्था भवन्ति – ज्ञानम्, गमनम्, प्राप्तिश्च।"**[2] .

'ऋ' धातु में 'यत्' या 'ण्यत्' प्रत्यय जुड़ने से 'आर्य' शब्द बनता है - ऋ + यत् = आर्य (जो गति करता है – प्रगतिशील)

ऋ + ण्यत् = आर्य (जो प्राप्ति हेतु कर्मशील हो)

इस प्रकार 'आर्य' शब्द का अर्थ केवल गति करने वाला ही नहीं, बल्कि ज्ञान, कर्म और प्राप्ति की दिशा में अग्रसर मानव है।

पतंजलि महाभाष्य में कहा गया है - **"आर्य शब्दो गुणे वर्तते।"**[3]-.अर्थात् आर्यत्व का निर्धारण गुण और आचरण से होता है, न कि जन्म या जाति से।

आर्य' शब्द का दार्शनिक अर्थ अत्यन्त व्यापक है-

- जो विचार, वाणी और कर्म में उन्नत हो,
- जो सत्य, अहिंसा, दया, संयम और आत्मानुशासन का पालन करता हो,
- जो समाज के उत्थान के लिए निरन्तर श्रम करता हो,
- जो अपनी चेतना को ऊँचा उठाने हेतु निरन्तर प्रयत्नरत हो।

अतः **आर्यत्व** = **उन्नति** + **नैतिकता** + **ज्ञान-साधना** + **सेवाभाव** + **शील**।

भाषाई समरूपता: आर्य शब्द का वैश्विक भाषाशास्त्रीय प्रसार

'आर्य' शब्द केवल संस्कृत तक सीमित नहीं, बल्कि सम्पूर्ण **इंडो-यूरोपीय भाषा परिवार** में इसकी धातु "ar" समान अर्थों में मिलती है।

भाषा	धातु / शब्द	अर्थ
ग्रीक	Ar	खेत जोतना
लैटिन	Arō	कृषि करना
गोथिक	Arjan	हल चलाना
लिथुआनियन	Arti	खेत जोतना
अवेस्तन	Arya	श्रेष्ठ मनुष्य

इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि "आर्य" का मूल भाव श्रम, सृजन और संस्कृति से जुड़ा है। आर्य वह है जो श्रमशील, सृजनशील और सभ्यता निर्माण में योगदान देने वाला हो।

शास्त्रीय ग्रंथों में 'आर्य' शब्द का प्रयोग

शास्त्रीय संस्कृत साहित्य में 'आर्य' शब्द का प्रयोग अत्यन्त बहुपक्षीय, व्यापक और गहन दार्शनिक संदर्भों में हुआ है। यहाँ 'आर्य' न तो किसी जाति का सूचक है और न ही किसी नस्ल का। शास्त्रीय ग्रन्थों में इसका अर्थ हमेशा उच्च चरित्र, उत्कृष्ट आचरण, संस्कार, परिष्कार, कर्तव्यनिष्ठा और सभ्यता से सम्बद्ध मिलता है। विभिन्न भाषाशास्त्रीय और दार्शनिक ग्रन्थ बताते हैं कि आर्यत्व नैतिक व सांस्कृतिक श्रेष्ठता का प्रतीक है।

अमरकोश

"महाकुलकुलीनार्यसभ्यसज्जनसाधवः।"[4] अमरकोश में 'आर्य' को "कुलीन, सभ्य, सज्जन और साधु" का पर्याय कहा गया है। यहाँ चार मुख्य विशेषताएँ महत्वपूर्ण हैं-

1. **कुलीन** - वंश से नहीं, बल्कि उत्तम संस्कारों से सम्पन्न।
2. **सभ्य** - सामाजिक मर्यादा, आचार-संहिता और विनम्रता से युक्त।
3. **सज्जन** - उदार, सत्यप्रिय, दयालु एवं न्यायप्रिय।
4. **साधु** - पवित्र आचरण, चरित्रबल और अंतःकरण की निर्मलता।

यह स्पष्ट करता है कि आर्यत्व **शुद्ध नैतिक-सांस्कृतिक श्रेष्ठता** का द्योतक है।

निरुक्त

यास्काचार्य के अनुसार-**"आर्यः शुद्धाचारवृद्धः।"**[5]

- **शुद्धाचार** - स्वच्छ, संयमी, नियमपरायण आचरण।
- **वृद्ध** - यहाँ आयु का नहीं, बल्कि अनुभव, विवेक और आन्तरिक परिपक्वता का प्रतीक।

अतः निरुक्त के अनुसार आर्य वह है जो **आचार की शुचिता, विवेक और जीवनानुभव** में श्रेष्ठ हो।

पाणिनि की अष्टाध्यायी में

"आर्यः स्वामिवैश्ययोः।"[6] यहाँ 'आर्य' का प्रयोग सामाजिक भूमिकाओं के संदर्भ में है-

- पाणिनि के अनुसार आर्यत्व जन्म से नहीं, बल्कि **कर्तव्यनिष्ठा, श्रमशीलता, सामाजिक उत्तरदायित्व और नैतिक नेतृत्व** से सम्बद्ध है।

यह व्याख्या आर्यत्व को वर्ण-व्यवस्था से पूर्णतः अलग करती है और इसे गुण-आधारित सिद्ध करती है।

पतंजलि महाभाष्य में

"आर्य शब्दो गुणे वर्तते।"[7] पतंजलि आर्यत्व को पूरा का पूरा गुण-प्रधान बताते हैं-

- आर्यत्व का आधार **गुण, व्यवहार, आचरण और नैतिक क्षमता** है।
- यह किसी भी जन्म, कुल, वर्ग या वर्ण से स्वतंत्र है।

पतंजलि के अनुसार आर्यत्व एक **आदर्श मानवीय चरित्र** है जिसमें सत्य, दया, संयम, सरलता, धैर्य, साहस और समत्वभाव का समन्वय हो।

इस प्रकार शास्त्रीय ग्रन्थों के विश्लेषण से यह सिद्ध होता है कि-

- 'आर्य' शब्द नैतिकता, सत्यनिष्ठा और सांस्कृतिक उत्कृष्टता का सूचक है।
- भारतीय परंपरा में आर्यत्व गुणों का फल है, जन्म का नहीं। आर्यत्व को विनय, संयम और शील के संदर्भ में देखा गया है।

वेदों में आर्य शब्द का प्रयोग और भावार्थ

ऋग्वेद में "आर्य" शब्द लगभग 31 स्थलों पर प्रयुक्त हुआ है। प्रत्येक स्थान पर इसका भावार्थ धर्म, प्रकाश, वीरता और ज्ञान से जुड़ा है।

"ज्योतिश्चक्रथुरार्याय।"[8]

देवों ने आर्यों के लिए ज्योति की रचना की - अर्थात ज्ञान और धर्म का प्रकाश आर्य के लिए है।

"अपावृणोर्योतिरार्याय।"[9]

इन्द्र ने आर्यों के लिए ज्ञान का द्वार खोला।

"इन्द्रः त्वा दासं वृषणं दमानं, आर्यं त्वा शवसा वाजयस्व।"[10]

यहाँ आर्य-दास भेद नैतिक स्तर पर है -आर्य सत्यनिष्ठ है, दास अज्ञान का प्रतीक।

इस प्रकार वेदों में आर्यत्व आध्यात्मिक ज्योति और सत्कर्मशीलता का प्रतीक है, न कि किसी जातीय श्रेष्ठता का।

उत्तरवर्ती ग्रंथों में आर्यत्व का विकास

मनुस्मृति – "आर्यव्रतः।"[11]

मनु यहाँ 'आर्यव्रतः' शब्द का उल्लेख करते हैं, जिसका तात्पर्य केवल धार्मिक व्रतों से नहीं, बल्कि एक *नैतिक अनुशासनपूर्ण जीवन-पद्धति* से है। 'व्रतः' शब्द मनु के यहाँ सत्य, आत्मसंयम, नियम-पालन और कर्तव्यनिष्ठा के व्यापक अर्थ में आता है। आर्यत्व यहाँ उन गुणों का समुच्चय है जो मनुष्य को उच्च चरित्र का धारक बनाते हैं-जैसे सत्यप्रियता, संयम, शुद्धाचार और धर्मानुराग। इस संदर्भ में मनुस्मृति स्पष्ट करती है कि आर्यत्व कोई जातिगत पहचान नहीं, बल्कि *आधारभूत नैतिक जीवनशैली* है।

वाल्मीकि रामायण – "आर्यः सर्वसमश्चैव सोमवत् प्रियदर्शनः।"[12]

वाल्मीकि भगवान राम के चरित्र का वर्णन करते हुए आर्यत्व की चार प्रमुख विशेषताएँ देते हैं-

(1) *सर्वसमत्व* - सभी प्राणियों के प्रति समान दृष्टिकोण;

(2) *सौम्यता* - हृदय की कोमलता और सौम्य वाणी;

(3) *प्रियदर्शनता* - ऐसा व्यक्तित्व जो अपने आचरण से सबको प्रिय लगे;

(4) *धर्मशीलता* - धर्म के मार्ग पर अडिग रहना। इस वर्णन से यह स्पष्ट होता है कि राम का चरित्र आर्यत्व का सर्वश्रेष्ठ प्रतिमान है-जहाँ शक्ति और कोमलता, वीरता और विनम्रता, दोनों का समन्वय देखने को मिलता है।

महाभारत – "व्रतेन हि भवत्यार्यः।"[13]

महाभारत में आर्यत्व को *व्रत-पालन* की दृढ़ता से जोड़ा गया है। यहाँ 'व्रत' का अर्थ किसी धार्मिक विधि तक सीमित नहीं है, बल्कि सत्य-निष्ठा, कर्तव्यपालन, आत्मानुशासन और दृढ़ संकल्प से है। इस श्लोक

में यह विचार व्यक्त किया गया है कि आर्यत्व जन्म से नहीं, बल्कि साधना, चरित्र-निर्माण और निरंतर नैतिक प्रयास से प्राप्त होता है। महाभारत इस प्रकार आर्यत्व को *नैतिक साधना-पथ* के रूप में देखता है।

गौतम धर्मसूत्र – "आर्यन्व्रतः।"[14]

गौतम धर्मसूत्रों में आर्यत्व का मूल 'व्रत' और 'धर्म' से है। 'आर्यन्व्रतः' का आशय है-वह व्यक्ति जिसका संपूर्ण जीवन व्रतों पर आधारित हो, अर्थात् सत्य, अहिंसा, शौच, दया, तप, संयम और सामाजिक नियमों का पालन। इस परंपरा में आर्यत्व केवल व्यक्तिगत जीवन तक सीमित नहीं बल्कि *सामाजिक और सांस्कृतिक दायित्वों* तक विस्तृत है। आर्य यहाँ वह है जो समाज में धर्म की रक्षा और पालन के लिए प्रतिबद्ध हो।

(ङ) कौटिल्य अर्थशास्त्र – "व्यस्थितार्यमर्यादः कृतवर्णाश्रमस्थितिः।"[15] कौटिल्य ने राज्य और समाज की स्थिरता को 'आर्य मर्यादा' से सम्बद्ध बताया है। 'आर्य मर्यादा' से आशय है-नियम, अनुशासन, सत्य, न्याय, शील और सामाजिक कर्तव्यों का पालन। जहाँ यह मर्यादा संभावित और प्रबल रूप से विद्यमान रहती है, वही राज्य सुव्यवस्थित रहता है। अर्थशास्त्र में आर्यत्व को शासन-नैतिकता का आधार माना गया है-अर्थात् कोई भी राज्य तभी दीर्घकालीन स्थिरता प्राप्त कर सकता है जब उसके नागरिकों और शासकों में आर्यत्व के गुण हों।

(च) अभिज्ञानशाकुन्तलम् (कालिदास) –"असंशयं क्षत्रपरिग्रहक्षमा। यदार्यमस्यामभिलाषि मे मनः।"16 - कालिदास के काव्य में आर्यत्व का एक अत्यंत सौम्य और सौंदर्यात्मक स्वरूप मिलता है। दुष्यन्त के कथन में आर्यत्व की भावनात्मक परिभाषा है-क्षमा, संयम, सौम्यता और प्रेमशीलता। शकुन्तला के प्रति दुष्यन्त के मन में उमड़ी आकर्षण भावना आर्यत्व की उसी कोमल धारा को दर्शाती है, जहाँ नैतिकता और भावनात्मक संवेदनशीलता का सुंदर समन्वय है। कालिदास यहाँ आर्यत्व को आचार और भाव-संस्कृति दोनों का सम्मिलित आदर्श बनाते हैं।

(छ) बौद्ध साहित्य – न तेन अरियो होति येन पाणानि हिंसति।

अहिंसा सब्बपाणानं अरियोति पवुच्चति।"[17]

बौद्ध परंपरा में आर्यत्व की परिभाषा सबसे अधिक करुणामयी और अहिंसात्मक रूप में मिलती है। बुद्ध कहते हैं-"जो हिंसा करता है, वह आर्य नहीं; प्राणियों पर दया रखने वाला ही आर्य है।" आर्यत्व का संबंध यहाँ *करुणा, मैत्री, अहिंसा और हृदय की पवित्रता* से है। धम्मपद के अनुसार किसी व्यक्ति की आर्यता उसके बाहरी चिह्नों से नहीं, बल्कि उसकी *अंतरात्मा की निर्मलता* से ज्ञात होती है।

इस प्रकार उत्तरवर्ती ग्रंथों में 'आर्य' शब्द का अर्थ निरंतर विस्तृत और गहन होता गया-धर्मानुशासन, चरित्र-निर्माण, शासन-नैतिकता, करुणा, सौम्यता और सांस्कृतिक आदर्श तक। यह स्पष्ट करता है कि आर्यत्व भारतीय परंपरा में केवल एक शब्द नहीं बल्कि *जीवन-दर्शन का आदर्श* है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती और आर्यत्व की पुनर्व्याख्या

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने उन्नीसवीं शताब्दी में 'आर्य' शब्द की उस वैदिक गरिमा को पुनर्जीवित किया, जो समय के साथ जाति-भेद, वंशाभिमान तथा सामाजिक विभाजन के कारण विकृत हो गई थी। उन्होंने यह प्रतिपादित किया कि 'आर्य' कोई जातिसूचक शब्द नहीं, अपितु **मानवीय गुणों, नैतिकता, सत्यनिष्ठा और कर्मप्रधान जीवन** का प्रतीक है। अपने *ऋग्वेद भाष्य-भूमिका* में उन्होंने स्पष्ट कहा-

"आर्याः श्रेष्ठ गुण-कर्म-स्वभावयुक्ता मनुष्याः।"[18]

यह कथन आर्यत्व को जन्माधारित नहीं, बल्कि **गुणाधारित** बनाता है। उनका आग्रह था कि जो सत्य का अनुसरण करे, अहिंसा का पालन करे, आत्मसंयमी हो, राष्ट्र और समाज का हितकारी हो - वही 'आर्य' कहलाने का पात्र है। इस प्रकार उन्होंने आर्यत्व की परिभाषा को पुनः वैदिक मूलों से जोड़कर आधुनिक सामाजिक सन्दर्भों में पुनर्स्थापित किया।

पारसी ग्रंथों में आर्य का संकेत

पारसी धार्मिक साहित्य, विशेषतः **जेन्द-अवेस्ता**[19] में 'आर्य' शब्द एक अत्यंत सम्मानित पद के रूप में प्रयुक्त हुआ है। *सिरोजह* के प्रसंगों में 'आर्य' का अर्थ **"श्रेष्ठ पुरुष", "उदार स्वभाव वाला"**, तथा "धर्म और सत्य के मार्ग पर चलने वाला मनुष्य" बताया गया है। ईरानी आर्य परंपरा में 'एर्य' या 'एर्यना' शब्द का प्रयोग भी इसी अभिप्राय से हुआ है, जो आगे चलकर *एर्यानाम वैजो* (Airyana Vaejo) के रूप में समूची सभ्यता का सांस्कृतिक नाम बन गया।

यह तथ्य अत्यंत महत्त्वपूर्ण है कि पारसी और वैदिक-दोनों ही परंपराओं में **आर्यत्व किसी जाति, नस्ल या रक्त-संबंध का नाम नहीं**, बल्कि मनुष्य की **नैतिक उत्कृष्टता, सत्यनिष्ठा, शौर्य, सद्भावना और उच्च सांस्कृतिक स्तर** का द्योतक है। इस प्रकार अवेस्ता में प्रयुक्त 'आर्य' दर्शाता है कि आर्यत्व का मूल भाव **गुण और चरित्र-प्रधान मानव आदर्श** है, न कि कोई भौगोलिक या जातीय समुदाय।

अतः यह दोनों परंपराओं के भाषाई और सांस्कृतिक इतिहास से प्रमाणित होता है कि 'आर्य' केवल भारतीय अवधारणा नहीं, बल्कि संपूर्ण **प्राचीन ईरानी–वैदिक साझा सभ्यता में मानव के गुणात्मक उत्कर्ष, उच्च चरित्र और सभ्यता-सूचक जीवन-मूल्यों** का प्रतीक रहा है। इस प्रकार 'आर्य' शब्द का प्राचीन पारसी साहित्य में प्रयोग वैश्विक और नैतिक मानवीयता को दर्शाता है, जो सांस्कृतिक से अधिक दार्शनिक है।

निष्कर्ष

उपरोक्त विस्तृत विवेचन से यह स्पष्ट रूप से सिद्ध होता है कि 'आर्य' शब्द केवल एक भाषाई अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि गहन दार्शनिक, सांस्कृतिक, नैतिक और मानवतावादी अवधारणा है। इसकी व्युत्पत्ति 'ऋ गतौ' धातु से होने के कारण इसमें गति, उन्नति, ज्ञान, साधना और प्राप्ति-इन सभी का समन्वय है। इस प्रकार आर्यत्व का मूल अर्थ है-निरन्तर प्रगति करने वाला वह मनुष्य, जो सत्य, तप, ज्ञान, श्रम और नैतिकता के मार्ग पर चलता हुआ आत्मोन्नति और लोकमंगल दोनों को साधता है।

वेदों, उपनिषदों, स्मृतियों, महाकाव्यों, बौद्ध ग्रंथों, अवेस्ता तथा महर्षि दयानन्द सरस्वती के वैदिक पुनरुत्थान-आंदोलन तक, 'आर्य' शब्द निरन्तर एक ही मूल संदेश देता है-कि आर्यत्व जन्म, जाति, वंश या वर्ण पर आधारित नहीं है। यह पूर्णतः गुण, कर्म, स्वभाव, शील, संयम और विवेकपूर्ण जीवनचर्या का परिणाम है। भारतीय और ईरानी दोनों प्राचीन सभ्यताओं में 'आर्य' शब्द का प्रयोग उच्च चरित्र, सत्यनिष्ठा, उदारता, सभ्यता और सांस्कृतिक परिष्कार वाले मनुष्यों के लिए समान रूप से किया गया है। इससे स्पष्ट है कि आर्यत्व किसी विशेष समुदाय की निजी पहचान नहीं, बल्कि एक सार्वभौमिक नैतिक आदर्श है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने इसी वैदिक मूलभाव को पुनः प्रतिष्ठित करते हुए 'आर्य' शब्द को जातीय संकीर्णता से मुक्त किया और इसे पुनः गुणप्रधान, चरित्राधारित और कर्मयोगनिष्ठ आदर्श के रूप में स्थापित किया। उनका यह दृष्टिकोण आधुनिक समाज के लिए अत्यन्त उपयोगी है, क्योंकि आज भी मानव–समाज अनेक सामाजिक, जातीय और आर्थिक विभाजनों से ग्रस्त है। ऐसे समय में आर्यत्व का यह वैदिक सन्देश-कि श्रेष्ठता वंश से नहीं, बल्कि आचरण से प्राप्त होती है-समाज में समानता, मानव–गरिमा, नैतिकता और बन्धुत्व की भावना को सुदृढ़ करता है।

अतः यह कहा जा सकता है कि 'आर्य' शब्द का वास्तविक और अकाट्य स्वरूप जाति या नस्ल नहीं, बल्कि **श्रेष्ठता, सदाचार, सत्य, कर्तव्यपरायणता और मानवधर्म** है। आर्यत्व की यह अवधारणा न केवल प्राचीन भारत की सांस्कृतिक धरोहर है, बल्कि आधुनिक विश्व के लिए भी एक नैतिक मार्गदर्शन है-जो मनुष्य को स्वयं के विकास के साथ-साथ समष्टि–कल्याण की दिशा में प्रेरित करता है। इस प्रकार आर्यत्व एक निरन्तर साध्य जीवन–आदर्श है, जो मानवता के उच्चतम मूल्यों का प्रतिनिधित्व करता है।

संदर्भ–सूची

1. ऋग्वेद 1.117.21

2. निरुक्त -1.2

3. महाभाष्य - 4.1.168

4. अमरकोश, 3.7.3

5. निरुक्त, 2.2

6. अष्टाध्यायी, 3.1.103

7. महाभाष्य, 4.1.168

8. ऋग्वेद 1.117.21

9. ऋग्वेद 2.11.18

10. ऋग्वेद 6.22.10

11. मनुस्मृति, 10.57

12. बालकाण्ड, 1.16

13. उद्योगपर्व, 88.52

14. गौतम धर्मसूत्र, 19/69

15. अर्थशास्त्र, 1/2

16. **अभिज्ञानशाकुन्तलम्**, 1.2

17. धम्मपद, गाथा 270/15

18. *ऋग्वेद भाष्य-भूमिका, परिचय*

19. **जेन्द-अवेस्ता** -*सिरोजह* 1–25